IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारत में पर्यावरण संरक्षण आंदोलन

डॉ गायत्री

सम्राट पृथ्वीराज चौहान राजकीय महाविद्यालय, अजमेर

शोध सारांश

भारत के पर्यावरण आंदोलन का इतिहास हमें वेदों और पुराणों से देखने को मिलता है।पर्यावरण के तत्व जल, पृथ्वी,अग्नि, वायु, आकाश, वनस्पति आदि के प्रति वेदों पुराणों में बड़ी श्रद्धा और संवेदना देखने को मिलती है। भारत में पर्यावरण संरक्षण की बात नई नहीं है पर्यावरण के प्रति जागरूकता सजगता प्रेम यह भारत में आदि काल से ही देखने को मिला ।पर्यावरण आंदोलन की उत्पत्ति औद्योगिक क्रांति के दौरान वातावरण में धुंए के प्रदूषण के बढ़ते स्तर के जवाब में हुई ।भारत में पर्यावरण आंदोलन में चिपको आंदोलन इसका मूल केंद्र रेनी गांव जिला चमोली था ।यह आंदोलन भी पर्यावरण में पेड़ों को बचाने के लिए शुरू किया गया और इस आंदोलन में जन सामान्य ने अपनी बलि दी ।अंत में इस आंदोलन के परिणाम स्वरूप पर्यावरण संरक्षण को बहुत बड़ा योगदान मिला । साइलेंट घाटी क्षेत्र जो अपनी धनी जैव विविधता के लिए मशहूर है। इस आंदोलन में साइलेंट घाटी की विशेष प्रजातियों को पेड़ पौधों को लुप्त होने से बचाने के लिए आंदोलन शुरू हुआ ।अंततः राज्य सरकार ने अपनी परियोजना को स्थगित करना पड़ा और इससे पारिस्थिति संतुलन बना रहा। एपिको आंदोलन कर्नाटक का यह आंदोलन युवा और महिलाओं का जंगलों को बचाने के लिए उन्हें गले लगाकर शुरू किया गया आंदोलन है । वन संरक्षण के क्षेत्र में इस आंदोलन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया । इसी क्रम में जंगल बचाओ आंदोलन, टिहरी बांध विरोधी आंदोलन, बिश्नोई आंदोलन, चिल्का बचाओ आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई | इन्हीं सभी आंदोलन का सविस्तार वर्णन किया गया है और अंत में हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि जनता ने और सरकार ने आंदोलन की गंभीरता को समझते हुए अपने निर्णय पर्यावरण संरक्षण के पक्ष में दिए । यही इन आंदोलनों का सकारात्मक निष्कर्ष रहा ।

मुख्य शब्द: पर्यावरण, जंगल बचाओ आंदोलन, टिहरी बांध विरोधी आंदोलन, बिश्नोई आंदोलन, चिल्का बचाओ आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन

परिचय

पर्यावरण आंदोलन एक अंतरराष्ट्रीय आंदोलन है जिसका प्रतिनिधित्व उद्यमों से लेकर जमीनी स्तर तक कई संगठनों द्वारा किया जाता है और यह एक देश से दूसरे देश से भिन्न होता है । अपनी विशाल सदस्यता भिन्न और दृढ़ विश्वास हो और कभी-कभी सट्टा प्रकृति के कारण पर्यावरण आंदोलन हमेशा अपने लक्ष्यों में एकजुट नहीं होता । भारत में पर्यावरण संरक्षण की बात कोई नई नहीं है पर्यावरण के प्रति जागरूकता सजगता और प्रेम यह भारत में आदिकाल से देखने को मिलता है । पर्यावरण से लगाव भारतीयों में जन-जन के मन में संवेदनशीलता का विषय रहा है हमारे मनीषियों द्वारा पर्यावरण आध्यात्मिक और वैज्ञानिक दोनों रूपों में आत्मसात किया और इसका प्रचार भी किया । क्योंकि पर्यावरण प्रकृति के साथ लापरवाही पूरे जीवमंडल के लिए विनाश का खतरा पैदा हो सकता है । इन सबके बीच पर्यावरण और प्रकृति की बात पुराण ,उपनिषद, श्रीमद भगवत गीता ,महाभारत, रामायण में इसका वर्णन खूब मिलता है । पर्यावरण के तत्व जल, पृथ्वी,अग्नि,वायु,आकाश ,वनस्पति आदि के प्रति वेदों पुराणों में बड़ी श्रद्धा व संवेदना देखने को मिलती है।पर्यावरण को स्वस्थ रखने के लिए चाहे यज्ञ हवन हो या पौधों को लगाना उनकी सुरक्षा हो या प्रकृति की पूजा,हमारे ऋषि-मुनियों के साथ आम सामान्य जन समूह ने इसे खूब सम्मान दिया है । [1]

पर्यावरण में प्रारंभिक रूचि 19वीं शताब्दी की शुरुआत रोमांटिक आंदोलन की एक विशेषता थी कवि विलियम वर्ड्सवर्थ ने लेख डिस्ट्रिक्ट में बड़े पैमाने पर यात्रा की थी "`एक प्रकार की राष्ट्रीय संपत्ति जिसमें प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार और रूचि है जिसके पास देखने के लिए आंख है और आनंद लेने के लिए दिल है। [2] पर्यावरण की उत्पत्ति औद्योगिक क्रांति के दौरान वातावरण में धुएं के प्रदूषण के बढ़ते स्तर के जवाब में हुई।महान कारखानों के उद्भव और कोयले की खपत में सहवर्ती अत्यधिक वृद्धि से औद्योगिक केंद्रों में वायु प्रदूषण के अभूतपूर्व स्तर को जन्म दिया उन्नीस सौ के बाद औद्योगिक रसायन निर्वहन की बड़ी मात्रा में अनुपचारित मानव अपशिष्ट के बढ़ते भार में वृद्धि हुई। [3] शहरी मध्यम वर्ग के बढ़ते आधुनिक दबाव के तहत पहला बड़े पैमाने पर आधुनिक पर्यावरण कानून ब्रिटेन के चार अधिनियम के रूप में आया। वर्ष1863 में पारित लेबलॉक प्रक्रिया द्वारा छोड़े गए हानिकारक वायु प्रदूषण (गैसीय हाइड्रोक्लोरिक एसिड) को विनियमित करने के लिए सोडा एश का उत्पादन करने के लिए उपयोग किया जाता है। [4]

चिपको आंदोलन:

26 मार्च 1974 गोरा देवी के नेतृत्व में चिपको आंदोलन शुरू किया गया। चिपको आंदोलन का मूल केंद्र रेनी गांव (जिला - चमोली) था ।चिपको आंदोलन मूलतः उत्तराखंड के वनों की सुरक्षा के लिए वहां के लोगों द्वारा 1970 के दशक में प्रारंभ किया गया आंदोलन है। इसमें लोगों ने पेड़ों को गले लगा लिया ताकि उन्हें कोई काट ना सके ।यह आलिंगन दरअसल प्रकृति और मानव के बीच प्रेम का प्रतीक बना और इसे चिपको की संज्ञा दी गई। चिपको आंदोलन का मूल केंद्र रेनी गांव था जो भारत तिब्बत सीमा पर जोशीमठ से लगभग 22 किलोमीटर दूर ऋषि गंगा और विष्णु गंगा के संगम पर बसा है। वन विभाग ने इस क्षेत्र के अंगू के 2451 पेड़ सायमंड कंपनी को ठेके पर दिए थे ।चंडी प्रसाद भट्ट के नेतृत्व में 14 फरवरी से 74 को एक सभा की गई जिसमें लोगों को चेताया गया कि यदि पेड़ गिराए गए तो हमारा अस्तित्व खतरे में पड़ जाएगा ये पेड़ ने सिर्फ हमारी चारों जलावन और जड़ी बूटियों की जरूरतें पूरी करते हैं बल्कि मिट्टी का क्षरण भी रोकते हैं ।इस सभा के बाद 15 मार्च को गांव वालों ने रेनी जंगल की कटाई के विरोध में जुलूस निकाला। ऐसा ही जुलूस 24 मार्च को विद्यार्थियों ने भी निकाला ।जब आंदोलन जोर पकड़ने लगा ठीक तभी सरकार ने घोषणा की कि चमोली में सेना के लिए जिन लोगों के खेतों को अधिग्रहण किया गया था वह अपना मुआवजा ले जाएं। गांव की पुरुष मुआवजा लेने चमोली गए। दूसरी ओर सरकार ने आंदोलनकारियों को बातचीत के लिए जिला मुख्यालय गोपेश्वर बुला लिया। इस मौके का लाभ उठाते हुए ठेकेदार और वन अधिकारी जंगल में घुस गए ।अब गांव में सिर्फ महिलाएं ही बची थी।लेकिन उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। बिना जान की परवाह किए 27 औरतों ने श्रीमती गोरा देवी के नेतृत्व में चिपको आंदोलन शुरू कर दिया। इस प्रकार 26 मार्च 1974 को स्वतंत्र भारत के प्रथम पर्यावरण आंदोलन की नींव रखी गई।

चिपको आंदोलन की मांगे प्रारंभ में आर्थिक थी जैसे वनों और वनवासियों का शोषण करने वाली दोहन की ठेकेदारी प्रथा को समाप्त कर 1 श्रमिकों की न्यूनतम मजदूरी का निर्धारण नया वन बंदोबस्त और स्थानीय छोटे उद्योगों के लिए आई थी| कीमत पर कच्चे माल की आपूर्ति ।धीरे-धीरे चिपको आंदोलन परंपरागत अल्पजीवी विनाशकारी अर्थव्यवस्था के खिलाफ स्थानीय अर्थव्यवस्था इकोलॉजी का एक सशक्त जन आंदोलन बन गया। अब आंदोलन की मुख्य मांग थी हिमालय के वनों की मुख्य उपज राष्ट्र के लिए जल है और कार्य मिट्टी बनाना है सुधारना और उसे टिकाऊ रखना है इसलिए इस समय खड़े हरे पेड़ों की कटाई उस समय [10 से 25 वर्ष] तक स्थगित रखी जानी चाहिए जब तक राष्ट्रीय वन नीति के घोषित उद्देश्यों के अनुसार हिमालय में कम से कम 60% क्षेत्र पेड़ों से ढक ना जाए। मैदा और जल संरक्षण करने वाले इस प्रकार के पेड़ों के पेड़ों का युद्ध स्तर पर रोपण किया जाना चाहिए जिनसे लोग भोजन वस्तु आदि की अनिवार्य आवश्यकताओं में स्वावलंबी हो सके ।रेनी में हुए चिपको की खबर पाकर अगले दिन से आसपास के 1 दर्जन से अधिक गांव के सभी पुरुष बड़ी संख्या में वहां पहुंचने लगे ।पेड़ों की चौकसी करने लगे। चिपको आंदोलन के आंदोलनकारी लोकगीत तथा कहानियों के माध्यम से जागरूकता लाने लगे। चिपको आंदोलन कई मामलों में सफल रहा |यह उत्तर प्रदेश में 1000 मीटर से अधिक की ऊंचाई पर पेड़ पौधों की कटाई पश्चिमी घाट और विंध्य में जंगलों की सफाई [क्लियर फैलिंग] पर प्रतिबंध लगवाने में सफल रहा। रामचंद्र गुहा के शब्दों में चिपको प्राकृतिक संसाधनों से संबंधित संघर्षों की व्यापकता का प्रतिनिधित्व करता है। इसने एक राष्ट्रीय विवाद का हल प्रदान किया। विवाद यह था कि हिमालय के वनों की सर्वाधिक सुरक्षा किसके हाथ होगी - स्थानीय समुदाय राज्य सरकार या निजी पूंजी पतियों के हाथ। मसला यह था कि शंकु वृक्ष चौड़े पत्ते वाले पेड़ या विदेशी पेड़ और फिर सवाल उठा कि वनों के असली उत्पाद क्या है - स्वच्छ हवा। अतः पूरे देश के लिए वन्य नीति निर्धारण की दिशा में इस क्षेत्रीय विवाद ने एक राष्ट्रीय स्वरूप ले लिया। चिपकू ने विकास के आधुनिक मॉडल के समक्ष एक विकल्प पेश किया है ।यह आम जनता की पहल का परिणाम था। यह आंदोलन गांधीवादी कार्यकर्ताओं मुख्यतः चंडी प्रसाद भट्ट और सुंदरलाल बहुगुणा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

साइलेंट घाटी आंदोलन:

केरल की शांत घाटी 89 किलोमीटर क्षेत्र में है जो अपनी धनी जैव विविधता के लिए मशहूर है। वर्ष1980 में यहां कुंती पुझ नदी पर एक परियोजना के अंतर्गत 200 मेगावाट बिजली निर्माण हेतु बांध का प्रस्ताव रखा गया। केरल सरकार इस परियोजना के लिए बहुत इच्छुक थी लेकिन इस परियोजना के विरोध में वैज्ञानिकों पर्यावरण कार्यकर्ताओं तथा क्षेत्रीय लोगों के स्वर गूंजनें लगे।इनका मानना था कि इससे इस क्षेत्र के कई विशेष फूलों पौधों तथा लुप्त होने वाली प्रजातियों को खतरा है।इसके अलावा यह पश्चिम घाट की कई सदियों पुरानी संतुलित परिस्थितिकी को भी भारी हानि पहुंचा सकता है।लेकिन राज्य सरकार इस परियोजना को किसी भी परिस्थिति में संपन्न करना चाहती थी। अंत में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने इस विवाद में मध्यस्थता और अंतर राज्य सरकार को इस परियोजना को स्थगित करना पड़ा |जो घाटी की परिस्थिति के संतुलन को बनाए रखने में मील का पत्थर साबित हुई |

अप्पिको आंदोलन:

सितंबर 1986 में सलकानी(कर्नाटक) तथा निकट के गांव से युवा तथा महिलाओं के पास के जंगल तक 5 मील की यात्रा का तय करके वहां के पेड़ों को गले लगाया।उन्होंने राज्य के वन विभाग के आदेश से कट रहे पेड़ों की कटाई रुकवाइ।लोगों ने हरे पेड़ों को काटने पर प्रतिबंध की मांग की।उन्होंने अपनी आवाज बुलंद कर कहा कि हम व्यापारिक प्रयोजनों के लिए पेड़ों की बिल्कुल भी नहीं करने देंगे और पेड़ों पर चिपक कर हठधर्मिता अपना कर बोले कि पेड़ काटने हैं तो पहले हमारे ऊपर कुल्हाड़ी चलाओ।वे पेड़ों के लिए अपनी जान भी देने को तैयार हो गए | जंगल में लगातार 38 दिनों तक चले विरोध आंदोलन ने सरकार को पेड़ों की कटाई रुकवाने का आदेश देने के लिए मजबूर किया।यह आंदोलन इतना लोकप्रिय हो गया है कि पेड़ काटने आए मजदूर भी पेड़ों की कटाई छोड़कर चले गए। अहिंसा की इस आंदोलन ने अन्य स्थानों के लोगों को भी आकर्षित किया।यह आंदोलन उत्तरोत्तर बढ़ता चला गया। एपिको आंदोलन दक्षिण भारत में पर्यावरण चेतना का स्रोत बना।इस ने इस बात को उजागर किया कि किस प्रकार वन विभाग की नीतियों से व्यापारिक वृक्षों को बढ़ावा दिया जा रहा है।जो आम आदमी को दैनिक जीवन में उपयोग होने वाले कई आवश्यक संसाधनों से वंचित कर रहा है।उसने उन ठेकेदारों के व्यवसायिक हितों के लालच का पर्दाफाश किया जो वन विभाग द्वारा निर्धारित संख्या से अधिक वृक्ष काट रहे थे।एपिको आंदोलन अपने तीन मुख्य उद्देश्यों में सफल रहा |

1. मौजूदा वन क्षेत्र का संरक्षण करने |
2. खाली भूमि पर वृक्षारोपण करने।
3. प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण को ध्यान में रखकर सदुपयोग करना।

इन उद्देश्यों को हासिल करने में स्थानीय स्तर पर स्थापित एक लोकप्रिय संगठन परिसर संरक्षण केन्द्र ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।एपिको आंदोलन ने लोगों के जीवन में उपयोग की जाने वाली चीजों की रक्षा की जैसे बांस के वृक्ष जिनका उपयोग हस्तशिल्प की वस्तुओं के बनाने में होता है तथा जिन को बेचकर स्थानीय लोग अपनी जीविका चलाते हैं।इस आंदोलन ने पश्चिम घाट के सभी गांव में व्यापारिक हितों से अपनी आजीविका के साधन जंगलों तथा पर्यावरण को होने वाले खतरे से सचेत किया। यह आंदोलन गांधीवादी तरीके से एक पोषण कारी समाज के लिए लोगों का पथ प्रदर्शित किया।

जंगल बचाओ आंदोलन:

साल 1982 में बिहार के (अब झारखंड में) सिंह भूमि जिले में अपने जंगलों को बचाने का आंदोलन शुरू किया था क्योंकि कुदरती साल के पेड़ों के जंगल को सरकार ने कीमती सागवान के पेड़ों के जंगल के रूप में तब्दील करने की योजना बनाई थी।सरकार के इस कदम को तब सियासत का लालची खेल करार दिया था और इसके बाद यह आंदोलन उड़ीसा और झारखंड राज्य में लंबे समय तक जारी रहा। वर्ष 1978 से 1783 तक चले सघन आंदोलन के दौरान अट्ठारह आंदोलनकारी मारे गए सैकड़ों घायल हुए और 15000 केस दर्ज किए गए। वर्ष 2006 में यूपीए सरकार ने जब जंगल अधिकार कानून पास किया तब जाकर आदिवासियों के ऐसे आंदोलन को राहत मिली। [5]

टिहरी बांध विरोधी आंदोलन:

टिहरी बांध उत्तराखंड के गढ़वाल क्षेत्र में भागीरथी और भीलगना नदी पर बनने वाले एशिया का सबसे बड़ा और विश्व का पांचवा सर्वाधिक ऊंचा (अनुमानित ऊंचाई 260.5 मीटर) बांध है। इस बांध का मुख्य उद्देश्य जल संसाधनों का बेहतर इस्तेमाल करना तथा पन बिजली परियोजनाओं का निर्माण करना है ।इसकी स्वीकृति 1972 में योजना आयोग ने दी थी। इस परियोजना का सुंदरलाल बहुगुणा तथा अनेक पर्यावरण विदों ने कई आधारों पर विरोध किया है। इंडियन नेशनल ट्रस्ट फॉर आर्ट एंड कल्चर हेरिटेज द्वारा टिहरी बांध के मूल्यांकन की रिपोर्ट के अनुसार यह बांध टिहरी कस्बे और उसके आसपास के 23 गांव को पूर्ण रूप से तथा 72 अन्य गांव को आंशिक रूप से जलमग्न कर देगा। जिससे 85600 लोग विस्थापित हो जाएंगे ।इस परियोजना से 5200 हेक्टेयर भूमि जिसमें से 1600 हेक्टेयर कृषि भूमि होगी तो जलाशय की भेंट चढ़ जाएगी । अनेक विशेषज्ञों का मानना है कि टिहरी बांध गहन भूकंपीय सक्रियता के क्षेत्र में आता है ।और अगर रिएक्टर पैमाने पर 8 की तीव्रता से भूकंप आया तो टिहरी बांध के टूटने का खतरा उत्पन्न हो सकता है। अगर ऐसा हुआ तो उत्तरांचल सहित अनेक मैदानी इलाके डूब जाएंगे ।टिहरी बांध विरोधी आंदोलन ने इस परियोजना से क्षेत्र के पर्यावरण ग्रामीण जीवन शैली वन्यजीव कृषि तथा लोक संस्कृति को होने वाली क्षति की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया। उम्मीद की जाती है कि इसका सकारात्मक प्रभाव स्थानीय पर्यावरण की रक्षा के साथ-साथ विस्थापित लोगों के पुनर्वास में मानवीय सोच के रूप में देखने को मिलेगा।[6]

विश्नोई आंदोलन:

मध्यकालीन राजस्थान से हमें पर्यावरण चेतना का एक सुदूर उदाहरण मिलता है ।विश्नोई संप्रदाय के संस्थापक जंभोजी (1451- 1536 ईसवी) द्वारा अपने अनुयायियों के लिए 29 नियम दिए गए थे। इन्ही 29 नियमों अर्थात 20 और 9 के कारण ही इस संप्रदाय का नाम विश्नोई पड़ा ।पर्यावरण के साथ सहचरिता बनाए रखने और हरे-भरे वृक्षों को काटने तथा पशु वध की पाबंदी ।उस समय राजस्थान के जो कल्पवृक्ष थे वे खेजड़ी के पेड़ थे जो रेगिस्तानी परिस्थितियों में भी पनप जाते थे। उनसे केवल पशुओं को चारा ही नहीं मिलता था उनकी फलियां से मनुष्य को खाना भी मिलता था। वर्ष 1730 में जोधपुर के महाराजा अजय सिंह ने एक विशाल महल बनाने की योजना बनाई ।जब महल के लिए लकड़ी की बात आई तो यह सुझाव दिया कि राजस्थान में वृक्षों का अकाल है लेकिन केवल एक ही जगह है जहां बहुत मोटे-मोटे पेड़ है ।वह है बिश्नोई समाज का खेजड़ी गांव। महाराजा की हुकुम पर महल के लोगों को कुल्हाड़ी यों के साथ गांव भेजा गया ।वे लोग गए और कुल्हाड़ी उसे सीधे खेजड़ी के मोटे-मोटे पेड़ काटने लगे। उसी समय एक बहन अमृता देवी ने पेड़ों की रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी ।उनके इस बलिदान की खबर सारे क्षेत्र में फैल गई और देखते-देखते 363 बिश्नोईयों ने इस स्थान पर अपना बलिदान दे दिया। जब वृक्ष प्रेमी रिचर्ड बर्वे बेकर भारत आए। और उन्होंने यह कहानी सुनी तो एक गदगद हो गए। उन्होंने विश्व के सभी देशों में वृक्ष मानव संस्था के माध्यम से इस कहानी को प्रचारित किया ।उन्होंने कहा यह भारत की महान संस्कृति है और दुनिया के सामने आज जो संकट है उसका उत्तर इसमें छिपा है ।आगे चलकर इस आंदोलन ने भारत में लोगों को चिपको आंदोलन के लिए प्रेरित किया। [7]

चिल्का बचाओ आंदोलन:

चिल्का उड़ीसा में स्थित एशिया की सबसे बड़ी खारे पानी की झील है जिसकी लंबाई 72 किलोमीटर तथा चौड़ाई 25 किलोमीटर और क्षेत्रफल लगभग 1000 किलोमीटर है। चिल्का 158 प्रकार के प्रवासी पक्षियों तथा चीते की व्यापारिक रूप से महत्वपूर्ण प्रजातियों का निवास स्थान है ।यह 192 गांव की आजीविका का साधन है जो मत्स्य पालन खासकर झींगा मछली पर निर्भर है । 50,000 से अधिक मछुआरे तथा दो लाख से अधिक जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए चिल्का पर निर्भर है ।1986 में तत्कालीन जेबी पटनायक सरकार ने निर्णय लिया कि चिल्का में 1470 झींगा प्रधान क्षेत्र को टाटा तथा उड़ीसा सरकार की संयुक्त कंपनी को पट्टे पर दिया जाएगा। उस समय इस निर्णय का विरोध मछुआरों के साथ-साथ विपक्षी राजनीतिक पार्टी जनता दल ने भी किया। सरकार ने इस प्रक्रिया द्वारा पर्यावरण को होने वाले नुकसान की भी परवाह नहीं की। इस प्रकार 1991 में एक संघर्ष ने जन्म लिया। चिल्का के 192 गांव के मछुआरों ने मत्स्य महासंघ के मंतव्य में एकजुट होकर अपने अधिकारों की लड़ाई शुरू की ।इस जन आंदोलन को देखते हुए अंततः उड़ीसा सरकार ने दिसंबर 1992 कोटडा को दिए गए पट्टे को अधिकार से रद्द कर दिया। इस प्रकार चिल्का बचाओ आंदोलन में न केवल स्थानीय पर्यावरण बल्कि लोगों के परंपरागत अधिकारों को पाने में भी सफलता हासिल की |

नर्मदा बचाओ आंदोलन:

नर्मदा बचाओ आंदोलन एक बार और मेरे भारत में चल रहे पर्यावरण आंदोलन की परिपक्वता का उदाहरण है। [8] इसने पहली बार पर्यावरण और विकास को राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा का विषय बनाया जिसमें न केवल विस्थापित लोगों बल्कि वैज्ञानिकों गैर सरकारी संगठनों तथा आम जनता को भी भागीदारी रही ।नर्मदा नदी पर सरदार सरोवर बांध परियोजना का उदघाटन 1961 में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने किया था। लेकिन 3 राज्यों गुजरात मध्यप्रदेश और राजस्थान के मध्य एक उपयुक्त जल वितरण नीति पर कोई सहमति नहीं बन पाई। 1969 में सरकार ने नर्मदा जल विवाद न्यायाधिकरण का गठन किया ताकि जल संबंधी विवाद का हल करके परियोजना का कार्य पूर्ण किया जा सके ।1979 में न्यायाधिकरण सरस्वती पर पहुंचा तथा नर्मदा घाटी परियोजना जन्म लिया ।जिसमें नर्मदा नदी तथा उसकी 4134 नदियों पर दो विशाल बांध हो गुजरात में सरदार सरोवर बांध और मध्यप्रदेश में नर्मदा सागर बांध 28 मध्यम बांध तथा 3,000 जल परियोजनाओं का निर्माण शामिल था ।1985 में इस परियोजना के लिए विश्व बैंक ने 450 करोड डॉलर का लोन देने की घोषणा की सरकार के अनुसार इस परियोजना से मध्य प्रदेश गुजरात राजस्थान के सूखाग्रस्त क्षेत्रों को 2.27 करोड़ हेक्टर भूमि को सिंचाई के लिए जल मिलेगा। बिजली का निर्माण होगा पीने के लिए जल मिलेगा तथा क्षेत्र में बाढ़ को रोका जा सकेगा। नर्मदा परियोजना ने एक गंभीर विवाद को जन्म दिया ।एक और इस परियोजना को समृद्धि और विकास का सूचक माना जा रहा था जिसके परिणाम स्वरूप सिंचाई पेयजल की आपूर्ति बाढ़ पर नियंत्रण रोजगार के नए अवसर बिजली तथा सूखे से बचाव आदि लाभों को प्राप्त करने की बात कही जा रही थी वहीं दूसरी और अनुमान है कि इससे तीन राज्यों की 37000 हेक्टेयर भूमि जलमग्न हो जाएगी। जिसमें 13000 हेक्टेयर वन भूमि है। यह भी अनुमान है कि इससे 248 गांव के एक लाख से अधिक लोग विस्थापित होंगे।जिनमें 58% लोग आदिवासी क्षेत्र के हैं ।अतः प्रभावित गांवों के करीब ढाई लाख लोगों के पुनर्वास का मुद्दा स्थानीय कार्यकर्ताओं ने उठाया। इन गतिविधियों को एक आंदोलन की शक्ल 1988 -89 के दौरान मिली जबकि स्थानीय स्वयंसेवी संगठनों ने खुद को नर्मदा बचाओ आंदोलन के रूप में गठित किया। [9] 1980 से 87 के बीच जनजातियों के अधिकारों की समर्थक गैर सरकारी संस्था अंक वाहिनी के नेता अनिल पटेल ने जनजातीय लोगों के पुनर्वास के अधिकारों को लेकर हाईकोर्ट में सर्वोच्च न्यायालय में लड़ाई लड़ी |

दूसरी ओर वर्ष 1989 में मेघा पाटकर द्वारा लाए गए नर्मदा बचाओ आंदोलन ने परियोजना तथा इससे विस्थापित लोगों के पुनर्वास की नीतियों के क्रियान्वयन की कमियों को उजागर किया है। शुरू में आंदोलन का उद्देश्य बांध को रोककर पर्यावरण विनाश तथा इससे लोगों के विस्थापन को रोकना था। बाद में आंदोलन का उद्देश्य बांध के कारण विस्थापित लोगों को सरकार द्वारा दी जा रही राहत कार्यों की देखरेख और उनके अधिकारों के लिए न्यायालय में जाना बन गया। आंदोलन की यह मांग है कि जिन लोगों की जमीन ली जा रही है उन्हें योजना में भागीदारी का अधिकार होना चाहिए उन्हें अपने लिए न केवल उचित भुगतान का अधिकार होना चाहिए बल्कि परियोजना के लाभों में भी भागीदारी होनी चाहिए इस प्रक्रिया में नर्मदा बचाओ आंदोलन ने वर्तमान विकास के मॉडल पर प्रश्न चिन्ह लगाएं। नर्मदा बचाओ आंदोलन एक जन आंदोलन के रूप में उभरा कई समाजसेवियों पर्यावरण विदों छात्रों महिलाओं आदिवासियों और किसानों तथा मानवाधिकार कार्यकर्ताओं का एक संगठित समूह बना ।हमने विरोध के कई तरीके अपनाएं जैसे भूख हड़ताल पर यात्राएं समाचार पत्रों के माध्यम से फिल्मी कलाकारों और हस्तियों को अपने आंदोलन में शामिल कर अपनी बात आम लोगों सरकार तक पहुंचाने की कोशिश की। इसमें मुख्य कार्यकर्ताओं में मेघा पाटकर के अलावा अनिल पटेल भुक्कड़ सम्मान से सम्मानित किए गए |अरुंधती राय, बाबा आप्टे आदि शामिल है नर्मदा बचाओ आंदोलन 1989 में एक नया मोड लिया। सितंबर 1989 में मध्यप्रदेश के हरसूद जगह पर एक आम सभा हुई जिसमें 200 से अधिक गैर सरकारी संगठनों के 45000 लोगों ने भाग लिया भारत में पहली बार नर्मदा का प्रश्न अब एक राष्ट्रीय मुद्दा बन गया यह पर्यावरण के मुद्दे का अब तक की सबसे बड़ी रैली थी जिसमें देश के सभी बड़े गैर सरकारी संगठन और आम आदमियों के अधिकारों की रक्षा में लगे समाजसेवियों ने हिस्सा लिया हरसूद सम्मेलन में न केवल बांध का विरोध किया बल्कि इसे विनाशकारी विकास का नाम दिया।पूरे विश्व में इस पर्यावरण घटना को बड़े ध्यान से देखा।

दिसंबर 1990 में नर्मदा बचाओ आंदोलन द्वारा एक संघर्ष यात्रा भी निकाली गई। पद यात्रियों को आशा थी कि वे सरकार को सरदार सरोवर बांध परियोजना पर व्यापक पुनर्विचार के लिए दबाव डाल सकेंगे। लगभग 6000 लोगों ने राजघाट से मध्य प्रदेश गुजरात तक की पदयात्रा की। इसका सकारात्मक परिणाम भी देखने को मिला जन भावनाओं को ध्यान में रखते हुए। विश्व बैंक ने 1991 में बांध की समीक्षा के लिए एक निष्पक्ष आयोग का गठन किया। इस आयोग ने कहा कि परियोजना का कार्य विश्व बैंक तथा भारत सरकार की नीतियों के अनुरूप नहीं हो रहा है ।इस प्रकार विश्व बैंक ने इस परियोजना से 1994 में अपने हाथ खींच लिए। [10] वर्ष1995 में सुप्रीम कोर्ट ने आदेश दिया कि सरकार बांध के बाकी

कार्यों को तब तक रोक दें जब तक विस्थापित हो चुके लोगों के पुनर्वास का प्रबंध हो जाता है ।18 अक्टूबर 2000 को सर्वोच्च न्यायालय ने बांध के कार्य को फिर शुरू करने और इसकी ऊंचाई 90 मीटर तक बढ़ाने को मंजूरी दे दी ।इसमें कहा गया है कि ऊंचाई पहले 90 फिर 138 मीटर तक जा सकती है लेकिन इसके लिए कदम कदम पर यह सुनिश्चित करना होगा कि पर्यावरण को खतरा तो नहीं है और लोगों को बसाने का कार्य ठीक तरीके से चल रहा है साथ ही न्यायपालिका ने विस्थापित लोगों के पुनर्वास के लिए नए दिशा निर्देश दिए जिनके अनुसार नए स्थान पर निर्वाचित लोगों के लिए 500 व्यक्तियों पर एक प्राइमरी स्कूल और एक पंचायत घर एक चिकित्सालय पानी और बिजली की व्यवस्था तथा एक धार्मिक स्थल अवश्य होना चाहिए। 17 अप्रैल 2006 को नर्मदा बचाओ आंदोलन की याचिका पर उच्चतम न्यायालय ने संबंधित राज्य सरकार को चेतावनी दी कि यदि विस्थापितों का उचित पुनर्वास नहीं हुआ तो बांध का और आगे निर्माण कार्य रोक दिया जाएगा |

निष्कर्ष:

यह कहा जा सकता है कि भारत में पर्यावरण संरक्षण की बात कोई नई नहीं है। पर्यावरण के प्रति जागरूकता सजगता और प्रेम यह भारत में आदिकाल से देखने को मिलता है ।पर्यावरण संरक्षण से जुड़े आंदोलनों की अगर बात की जाए तो चाहे वह चिपको आंदोलन हो चाहे वह टिहरी बांध आंदोलन हो चाहे वह साइलेंट घाटी आंदोलन हो चाहे वह जंगल बचाओ आंदोलन नर्मदा बचाओ आंदोलन हो इन सभी आंदोलनों में हमने यह देखा कि लोग प्रकृति और पर्यावरण से कितने जुड़े हुए हैं ।सभी आंदोलनों में पर्यावरण विदों और स्वयंसेवी संगठनों और आम जनता ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। आंदोलन के दौरान सरकार ने विरोध को समझते हुए अपनी योजनाओं को वापस भी लिया। हम यह कह सकते हैं कि भारत में पर्यावरण आंदोलनों का इतिहास बहुत विकसित है ।पर्यावरण आंदोलनों ने देश के समक्ष पर्यावरण आधारित विकास का विकल्प पेश किया है |

संदर्भ सूची:

1. https://www.mpgkpdf.com>2020/10
2. वुड्सवर्थ, विलियम (1835) दृश्यों के विवरण के साथ इंग्लैंड के उत्तर में झीलों के जिले के माध्यम से एक गाइड और सी पर्यटकों और निवासियों के उपयोग के लिए (5 वा संस्करण)।कैंडल, इंग्लैंड : हडसन ओह निकोलसन /पी |
3. जलवायु परिवर्तन पहले 30 साल पहले समाचार बन गया ।हमने इसे ठीक क्यों नहीं किया पत्रिका | 21जून 2018/14जनवरी 2019को लिया गया
4. जलवायु परिवर्तन पहले 30 साल पहले समाचार बन गया ।हमने इसे ठीक क्यों नहीं किया पत्रिका | 21जून 2018/14जनवरी 2019को लिया गया
5. https://hindi.news18. com
6. hi.vikaspedia. in
7. hi.vikaspedia. in
8. नर्मदा बचाओ आंदोलन की ताजा खबर, ब्रेकिंग न्यूज़ in hindi -NDTV india "(https://ndtv.in /topic/ नर्मदा बचाओ आंदोलन)ndtv. in अभिगमन तिथि 2021-10- 26
9. भारतीय संस्कृति में वैदिक काल से ही दिया गया पर्यावरण को महत्व "(https ;//www. jagran. com /himachal pradesh/kangra - the -importance -given -to -the- environment- in - India- culture- since- the- Vedic period - 22133 184. html) Dainik Jagran. अभिगमन तिथि 2021- 10 – 26
10. Bharatvarsh, TV9(2021- 10- 07) सत्ता के 20 साल ; गुजरात के "ब्रैंड गुजरात " बनाकर नरेंद्र मोदी ने की प्रशासनिक पारी की शुरुआत "(https://www.tv9hindi. com / opinion /20-years -of-narendra modi -pm-modi-pm-modi-started -the - administrative -inning-by-making gujarat-तो brand-gujarat-857910. html)TV9 Bharatvarsh(hindi मे). अभिगमन तिथि2021-10-26.